LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 12: भक्तियोग

1/2 (श्लोक 1-10), शनिवार, 27 अप्रैल 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/vKz1TgV6wpA

ईश्वर को सभी प्रकार की भक्ति प्रिय है

सुमधुर सङ्कीर्तन, हनुमान चालीसा पाठ, प्रारम्भिक प्रार्थना, दीप प्रज्वलन तथा गुरु वन्दना के उपरान्त विवेचन सत्र प्रारम्भ हुआ।

हम सब भाग्यशाली हैं क्योंकि हमारे जीवन में गीता के प्रति उत्सुकता उत्पन्न होना ही भाग्योदय की ओर बढ़ा हुआ प्रथम कदम है। हमें प्रत्येक काल में योगयुक्त बनें रहना चाहिए। हम जो भी कार्य करें, वह योगयुक्त हो जाए। भगवद्गीता एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है, जो रणाङ्गण में कही गई। अन्य सारे शास्त्र ऋषियों ने अपने-अपने आश्रम में लिखे, जो बहुत सुन्दर उपवनों या हिमालय की वादियों में बैठकर लिखे गए लेकिन रणाङ्गण में किसी धर्मग्रन्थ का प्राकट्य हो, यह अपने आप में एक अद्भुत घटना है।

रणाङ्गण तो हम सबके जीवन में प्रतिदिन ही है। जग और जीवन में प्रतिक्षण युद्ध चलता रहता है लेकिन उस युद्ध में कैसे आगे बढ़ना है, यह यदि समझना हो तो रणाङ्गण पर अर्जुन के निमित्त से जो भगवद्गीता स्वयं भगवान ने कही, जब इसे समझते हैं तो भौतिक जीवन तथा आधिभौतिक जीवन में, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्र जीवन में हम किस प्रकार से व्यवहार करें, इसकी हमें कुञ्जी मिल जाती है। भगवद्गीता हर प्रसङ्ग में हमारा मार्गदर्शन करती है। यह एकमात्र ग्रन्थ है जो स्वयं भगवान ने अपनी वाणी से उद्धृत किया। भगवान की वाणी से प्रकट हुआ एक-एक अक्षर मन्त्र बन गया।

जब मैंने गीता जी को कण्ठस्थ करना प्रारम्भ किया तो मेरे पुत्र ने कहा, आप इसे याद क्यों कर रहे हैं? गूगल में सर्च करिये, अर्थ सहित सब कुछ मिल जायेगा। मैंने अपने पुत्र से पूछा कि क्या तुम्हारी माँ तुम्हें दूध चीनी डालकर दे देती है या उसे मिलाती भी है। पुत्र ने कहा कि वह मिला कर देती है, तभी मिठास आती है। मैंने उसे बताया कि बेटा, उसी प्रकार नित्य याद करने से, गीता जी की मिठास अनुभव होने लगती है। निरन्तर अध्ययन करने से यह समझ में आने लगता है कि इसके माध्यम से जीवन का तनाव दूर होता है तथा जीवन जीने का तरीका आता है।

अर्जुन के हर प्रश्न पर भगवान ने वेद और उपनिषद रूपी गायों का दोहन किया और बछड़ा अर्जुन बना।

इसलिए भगवद्गीता की स्तुति में कहा गया:

सर्वोपनिषदो गावो, दोग्धा गोपालनन्दन।

पार्थो वत्स: सुधीर्भोक्ता, दुग्धं गीतामृतं महत्।।

अर्थात् सारे उपनिषदों की गाय और दोहन करने वाला दोग्धा- गोपालनन्दन। उपनिषदों के अमृत का प्राशन करने वाला वत्स अर्जुन।

भगवद्गीता में चार लोगों का संवाद है-

प्रथम धृतराष्ट्र जिन्होंने एकमात्र श्लोक कहा।

दूसरे सञ्जय

तीसरे अर्जुन

चौथे स्वयं भगवान श्रीकृष्ण।

यहाँ प्रत्येक अध्याय को अलग-अलग नाम दिए गए। जैसे - प्रथम अध्याय अर्जुनविषादयोग, द्वितीय अध्याय साङ्ख्ययोग, तृतीय अध्याय कर्मयोग। इस प्रकार सभी प्रकार के योग बताते हुए बारहवें अध्याय में भक्तियोग बताया। बारहवें अध्याय में अर्जुन ने भगवान से प्रश्न पूछे, जो हम सभी के मन में चलते हैं। अर्जुन के बहाने हमारे मन के प्रश्न भगवान से पूछे जा रहे हैं। बारहवें अध्याय का पठन सबसे पहले इसलिए किया जाता है क्योंकि यह सबसे छोटा, सबसे मीठा और सबसे सरल अध्याय है और अन्ततोगत्वा भक्ति के मार्ग पर हम सबको आना ही पड़ता है।

12.1

अर्जुन उवाच
एवं(म्) सततयुक्ता ये, भक्तास्त्वां(म्) पर्युपासते|
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं (न्), तेषां(ङ्) के योगवित्तमाः||1||

अर्जुन बोले - जो भक्त इस प्रकार (ग्यारवें अध्याय के पचपनवें श्लोक के अनुसार) निरन्तर आप में लगे रहकर आप (सगुण साकार) की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण निराकार की ही (उपासना करते हैं), उन दोनों में से उत्तम योगवेत्ता कौन हैं?

विवेचनः- अर्जुन ने पूछा कि जो भक्त सतत् रूप से आप में लगे रहकर आपके सगुण साकार रूप की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण निराकार की ही उपासना करते हैं, उन दोनों में से उत्तम योगवेत्ता कौन है? भगवान ने तुरन्त उत्तर दिया कि सगुण उपासना करने वाले श्रेष्ठ योगी कहलाते हैं।

यहाँ भक्त का अर्थ है दो से एक हो जाना। **"मुझमें तुममें है भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो"** अर्थात् जब भगवान और भक्त एकाकार हो गए, तब हम विभक्ति से भक्ति की ओर बढ़ते हैं। उपासना अर्थात् उप तथा आसन, अर्थात् भगवान के निकट बैठना।

उपासना दो प्रकार की होती है-

एक सगुण साकार की उपासना-जिसमें भगवान की मूर्ति को सामने रख कर उपासना की जाती है।

दूसरी अक्षर, अव्यक्त, निर्गुण, निराकार ब्रह्म की उपासना- चराचर जगत में जिसका भी अस्तित्व है, अर्थात् पर्वत, वृक्ष, नदी आदि उन सबकी उपासना।

अर्जुन का यह प्रश्न ऐसा ही है, जैसे - कोई किसी माँ से पूछें कि तुम्हें अपना बड़ा बेटा अधिक प्रिय है या छोटा बेटा? और फिर यह कहें कि तुम इनमें से एक को रख लो और एक को मेरे साथ भेज दो। ऐसे में माँ यही कहेगी कि बड़ा तो फिर भी समझदार है, मैं छोटे को अपने पास रख लेती हूँ क्योंकि छोटा भूख लगने पर भी रोता है और मच्छर काट ले या लङ्गोट गीला हो जाए तो भी रोने लगता है, लेकिन मैं इसके रोने से समझ लेती हूँ कि इसे अभी भूख लगी है या यह अस्वस्थ है। यह पूरी तरह से मेरे ऊपर आश्रित है इसलिए मैं इसे आपको नहीं दे सकती। बड़ा वाला तो समझदार है, उसे भूख लग जाए तो वह बोल सकता है, परन्तु आप उसे भी ले तो जा रहे हैं,

पर जल्दी ले आना क्योंकि मैं उसके बिना भी नहीं रह सकती। इस प्रकार माँ ने उत्तर दे दिया परन्तु प्रिय उसे दोनों ही हैं। इसी प्रकार भगवान ने भी उत्तर दिया-

12.2

श्रीभगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां(न्), नित्ययुक्ता उपासते|
श्रद्धया परयोपेता:(स्), ते मे युक्ततमा मताः||2||

श्रीभगवान् बोले - मुझ में मन को लगाकर नित्य-निरन्तर मुझ में लगे हुए जो भक्त परम श्रद्धा से युक्त होकर मेरी (सगुण साकार की) उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान जी कहते हैं - जो मुझ में चित्त और बुद्धि को लगाकर प्रतिदिन परम श्रद्धा से युक्त होकर मेरी सगुण साकार की उपासना करते हैं, वे मेरे विचार से सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

एक भक्त के स्वप्न में भगवान आए और बोले चलो तुम्हें तुम्हारा प्रवास दिखाता हूँ। भक्त भगवान के साथ चल दिया। मुलायम रेत पर भगवान ने कहा, देखो चार चरण रेत पर दिख रहे हैं। इनमें से दो तुम्हारे हैं और दो मेरे। वे आगे बढ़े जहाँ पर्वत के मार्ग पर पथरीले पत्थर पड़े थे। भक्त ने देखा कि अब तो दो ही चरण दिखाई दे रहे हैं। भक्त अचरज में पड़ गया और उसने तुरन्त भगवान से कहा कि सुख में तो आप मेरे साथ थे प्रभु और जैसे ही सङ्कट आया आप कहाँ चले गए? भगवान ने कहा "पगले ये तो मेरे चरण हैं, तू तो मेरी गोद में है" इसलिए सहज स्वीकार की भावना से सतत् श्रद्धा के साथ उपासना करनी होगी। इस प्रकार की सोच रखने वाले भक्त श्रेष्ठतम योगी कहलाने के योग्य हैं।

12.3, 12.4

ये त्वक्षरमनिर्देश्यम्, अव्यक्तं(म्) पर्युपासते|
सर्वत्रगमचिन्त्यं(ञ्) च, कूटस्थमचलं(न्) ध्रुवम्||3||
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं(म्), सर्वत्र समबुद्धयः|
ते प्राप्नुवन्ति मामेव, सर्वभूतहिते रताः||4||

और जो (अपने) इन्द्रिय समूह को वश में करके चिन्तन में न आने वाले, सब जगह परिपूर्ण, देखने में न आने वाले, निर्विकार, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की तत्परता से उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में प्रीति रखन् वाले (और) सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।
जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि ऐसा नहीं है कि केवल वे ही योगवेत्ता हैं। निराकार की उपासना भी उतनी ही श्रेष्ठ है। वे भी वहीं पहुँचने वाले हैं जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं।

वे प्राणिमात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य भी मुझे ही प्राप्त होते हैं। देह पर प्रकट होकर व्यवहार में प्रकट होने वाला, सभी प्राणियों में हितकारी होकर उसमें रत रहता है। शत्रु में भी भगवान का रूप देखता है, ऐसा व्यक्ति कुत्ते, बिल्ली और

छिपकली आदि के प्रति भी समता का भाव रखता है। सर्वव्यापी में वह मेरा ही चिन्तन करता है।

केवल चर ही नहीं, बल्कि अचर में भी जैसे गोवर्धन पर्वत की पूजा, गङ्गा मैया की पूजा, सभी वृक्षों की पूजा, तुलसी विवाह के दिन तुलसी जी की पूजा, वट वृक्ष की पूजा, आँवला नवमी को आँवला वृक्ष की पूजा, नाग पञ्चमी के दिन नागों की पूजा, अर्थात सभी पञ्चभूतों की पूजा के लिये कहा गया है।

सभी देवी-देवताओं के वाहन के रूप में पशुओं को जोड़ दिया गया, जैसे लक्ष्मी जी के साथ उल्लू, गणेश जी के साथ चूहा, दुर्गा जी के साथ सिंह आदि। अब जब देवी-देवताओं की पूजा करेंगे तो उनके वाहन की पूजा भी करनी पड़ेगी।

अनिर्देश्य अर्थात् जिसे निर्देश करके बताया नहीं जा सकता, ध्रुव तारे जैसे अचल होना पड़ता है।

12.5, 12.6

क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम्, अव्यक्तासक्तचेतसाम्|
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं(न्), देहवद्भिरवाप्यते||5||
ये तु सर्वाणि कर्माणि, मयि सन्न्यस्य मत्पराः|
अनन्येनैव योगेन, मां(न्) ध्यायन्त उपासते||6||

अव्यक्त में आसक्त चित्त वाले उन साधकों को (अपने साधन में) कष्ट अधिक होता है; क्योंकि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त-विषयक गति कठिनता से प्राप्त की जाती है।
परन्तु जो कर्मों को मेरे अर्पण करके (और) मेरे परायण होकर अनन्य योग (सम्बन्ध) से मेरा ही ध्यान करते हुए (मेरी) उपासना करते हैं।

विवेचनः- श्रीभगवान कहते हैं कि निराकार की उपासना के मार्ग में कष्ट अधिक होता है; क्योंकि हम जिस देह में आए हैं, उसमें हम स्वयं को सगुण देख रहे हैं और हमें उसी की आदत हो गई है। हमें बचपन से ही सबको व्यक्त रूप में देखने की आदत है। मैंने सबका साकार रूप ही देखा है। निर्गुण निराकार रूप को समझना अत्यन्त कठिन है इसलिए यह तरीका बहुत कठिन लगता है।

अब सौंप दिया इस जीवन का,
सब भार तुम्हारे हाथों में,

जीत भी तेरी, हार भी तेरी, जो यह भाव रखता है, वह भवसागर से पार हो जाता है। जो यह सोच ले कि ईश्वर ही सब कुछ करेंगे, मुझे व्यर्थ हाथ-पैर मारने की आवश्यकता नहीं है, वही सच्चा भक्त है। भक्ति के लिए समर्पण बहुत आवश्यक है।

जब भगवान गङ्गा पार करने के लिए केवट के पास पहुँचे तब केवट ने कहा कि आपके चरणों के स्पर्श से तो पत्थर भी महिला बन जाती है, यदि मेरी नाव को कुछ हो गया तो मैं अपना जीवन-यापन कैसे करूँगा? पहले आपके पाँव रगड़-रगड़ कर धो कर साफ करूँगा, फिर ही नाव पर बैठियेगा। रामजी ने उसकी शर्त मान ली। केवट ने खूब रगड़-रगड़ कर प्रभु के पैर धोए। यह देखकर लक्ष्मण और सीता जी भी अचम्भित थे क्योंकि जिन श ने वर पूजा के समय राजा जनक को भी अपने पैर नहीं पखारने दिए, आज एक केवट उन चरणों को रगड़-रगड़ कर धो रहा था। यह अद्भुत भक्त है। जब भगवान नदी पार करने के बाद नाव से नीचे उतरे तो उन्हें लगा कि मुझे केवट को कुछ पारिश्रमिक देना चाहिए परन्तु वे संन्यासी थे, उनके पास कुछ नहीं था। उनकी अवस्था देखकर सीता मैया को समझ में आ गया और उन्होंने अपनी अङ्गूठी निकाल कर भगवान को दे दी। श्रीराम ने जब वह अङ्गूठी केवट को देनी चाही तो उसने लेने से मना कर दिया और बोला "क्या करते हैं? भगवान! मैं तो गीत गाते-गाते नाव चला रहा था। गङ्गा मैया भी उछल-उछल कर आपके चरण स्पर्श करने के लिए बहुत ऊपर आ रही थीं और मैं बार-बार उनसे प्रार्थना कर रहा था कि गङ्गा मैया कहीं मेरी नाव में मत आ जाना। यह तो मेरा परम सौभाग्य है। प्रभु मैंने आज आपको गङ्गा पार कराई, मैं इसका कोई पारिश्रमिक नहीं लूँगा क्योंकि मैं एक व्यवसायी हूँ। गङ्गा को पार करवाना मेरा व्यवसाय है, परन्तु जब मेरा समय आएगा तो आप मुझे भवसागर से पार करा देना। हम दोनों का एक ही व्यवसाय है और एक श्रमिक कभी किसी दूसरे श्रमिक से कुछ पारिश्रमिक नहीं लेता है।" निर्गुण की उपासना करने वाले स्वयं तैर कर भवसागर पार कर जाते हैं।

भगवान कहते हैं कि जो कर्मों को मेरे अर्पण करके और मेरे परायण होकर अनन्य योग से मेरा ही ध्यान करते हुए मेरी ही उपासना करते हैं, वे श्रेष्ठ हैं।

12.7

तेषामहं(म्) समुद्धर्ता, मृत्युसंसारसागरात्|
भवामि नचिरात्पार्थ, मय्यावेशितचेतसाम्||7||

हे पार्थ ! मुझ में आविष्ट चित्त वाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ।

विवेचनः- श्रीभगवान जी कहते हैं कि हे पार्थ! मुझ में आविष्ट चित्त वाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूपी संसार-सागर से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ।

यदि हम अपनी जीवन रूपी नौका को ईश्वर को सौंप दें तो हमारा उद्धार होकर ही रहेगा, परन्तु उसके लिए पूर्ण रूप से अपने आप को भगवान को समर्पित करना होगा।

भगवान कहते हैं, सबसे सरल कार्य है कि मेरी नाव में बैठ जाओ। जो शीघ्र मुझमें चित्त लगा लें उनको भवसागर से पार करवाना मेरा दायित्व है। जबकि निर्गुण भक्ति वाले स्वयं भवसागर से पार चले जाते हैं।

12.8

मय्येव मन आधत्स्व, मयि बुद्धिं(न्) निवेशय|
निवसिष्यसि मय्येव, अत ऊर्ध्वं(न्) न संशयः||8||

(तू) मुझ में मन को स्थापन कर (और) मुझ में ही बुद्धि को प्रविष्ट कर; इसके बाद (तू) मुझ में ही निवास करेगा (इसमें) संशय

नहीं है।

विवेचनः- श्रीभगवान जी कहते हैं कि मुझ में मन और बुद्धि को प्रविष्ट कर फिर तू मुझ में ही निवास करेगा इसमें कोई संशय नहीं है। तुम अपनी बुद्धि का निवेश मेरे अन्दर कर दो।

भगवान कहते हैं कि जब तुम अपने मन और बुद्धि से मेरे निमित्त आ जाओगे तो मैं तुम्हारे अन्दर ही निवास करूँगा। मन तो मान लेता है कि ये भगवान हैं, परन्तु बुद्धि प्रश्न करती है कि क्या पत्थर की मूर्ति में भी कभी भगवान होते हैं? बहुत से लोग मन्दिर के बाहर से ही अपने दोनों गालों पर हाथ लगाकर भगवान से कहते हैं कि हमारे पास अन्दर आने का समय नहीं है भगवान। जब तक मन और बुद्धि को पूरी तरह से भगवान में समर्पित न कर दें तब तक सारी पूजा व्यर्थ है।

गीता में ज्ञान और विज्ञान, दोनों साथ-साथ चलते हैं। भगवान स्वयं मार्गदर्शन करने वाले हैं। गीता पढ़ने से ज्ञान की एक-एक पर्त खुलती जाती है। ऐसे लोगों का मोक्ष जीवन कील में भी और मृत्यु के पश्चात भी असंशय हो जाता है। शबरी ने भी तो ऐसी ही भक्ति की थी। शबरी सात-आठ साल की ही थी। उसके पिता कुछ मेमने खरीद कर लाए थे। वह उनके साथ खेलती थी। एक दिन शबरी मेमनों के साथ खेल रही थी तब उसके पिता ने कहा कि खेल ले जब तक खेलना है, जब तेरा विवाह होगा तो यह सब काट के पका दिए जाएँगे। यह सुनकर शबरी रात भर सो नहीं पाई और रात में ही घर से भाग गई। सुबह जब पता चला कि शबरी घर पर नहीं है तो उसको ढूँढने के लिए उसके पिता ने आदमी भेजे। लोगों को आता देखकर शबरी एक पेड़ पर चढ़ गई। दिन भर पेड़ पर रही और रात को दौड़ने लग गई। इस प्रकार वह दिन में तो पेड़ पर चढ़ जाती और रात को दौड़ती। इस प्रकार करते-करते एक दिन वह एक आश्रम के पास पहुँच गई। वहाँ उसने अत्यन्त सात्त्विक ऋषियों को देखा। आश्रम के गुरु मतङ्ग ऋषि ने उसे आश्रम में रहने की अनुमति दे दी। एक दिन ऋषि मतङ्ग ने कह दिया कि आज मेरा जाने का दिन आ गया है, जिसको जो भी प्रश्न पूछने हों वह पूछ ले। सभी शिष्य अपने-अपने प्रश्न पूछने लगे परन्तु शबरी तो बहुत छोटी थी। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि मैं क्या पूछूँ? जब उसका अवसर आया तो वह बोली आप कहाँ जा रहे हैं? क्या आप कभी नहीं आएँगे? मुझे सिर्फ यह बता दीजिए कि भगवान कहाँ मिलेंगे? क्या वह मुझे कभी मिलेंगे भी या नहीं? मतङ्ग ऋषि ने कहा, भगवान तुझे मिलने यहीं आएँगे, तू उनकी प्रतीक्षा करती रहना। तब से शबरी भगवान की प्रतीक्षा करने लगी। मतङ्ग ऋषि के स्वर्गवास के बाद सभी शिष्य इधर-उधर चले गए परन्तु शबरी उसी आश्रम में ही रही।

प्रतिदिन भगवान की प्रतीक्षा करती और कहती कि मेरे राम आएँगे। पूरब की दिशा में झाड़ू लगाती। एक दिन उसे समझ आया, क्या पता भगवान पश्चिम से आएँ या दक्षिण से या उत्तर से आ जाएँ और तब से उसने चारों दिशाओं में साफ-सफाई करनी प्रारम्भ कर दी। शबरी प्रतिदिन नदी पर जाती और जल लेकर आती कि मेरे राम आएँगे। वह अपना अस्तित्व ही भूल गई। वह नित्य जल लाती और बेर आदि फल ला कर रखती। उन्हें चख भी लेती कि कहीं कोई फल खराब न हो। इस प्रकार करते-करते शबरी बूढ़ी हो गई परन्तु उसे विश्वास था कि मेरे गुरुजी ने कहा है कि श्रीराम आएँगे, तो वे जरूर आएँगे। नित्य पुष्प ला कर रखती थीं कि मेरे राम आएँगे। वह रात को सोती भी नहीं थी। उसे लगता था कि कहीं ऐसा न हो कि राम रात में आ जाएँ और मैं सोती ही रह जाऊँ। शबरी न तो सोई और न ही उसका विश्वास कम हुआ। यह भक्तियोग का शिखर है। जब श्रीराम आए तो शबरी की आँखों से आँसू बहने लगे, वह जब भगवान के चरण धोने के लिए जल लेने जाने लगी तो श्रीराम ने कहा कि शबरी तेरा काम तो हो गया। तूने अपने आँसुओं से मेरे चरण पहले ही धो दिए हैं। ऐसा सौभाग्य सिर्फ शबरी को मिला।

भगवान ने शबरी को निमित्त बनाकर वहाँ के निवासियों को नवधा भक्ति यथा- श्रवण, कीर्तन, प्रभु-स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्यभाव, सख्य भाव तथा आत्मनिवेदन के विषय में बताया।

शबरी वहीं समाधिस्थ हो गई तथा भगवान के हाथों से उसका अन्तिम संस्कार हुआ। यह शबरी का विश्वास था, पूरे जीवन का श्रम था। उसने भगवान के अतिरिक्त पूरे जीवन कुछ और सोचा ही नहीं। केवल मन ही नहीं, बुद्धि भी पूरी तरह झुक गई थी।

अब भगवान बहिरङ्ग से अन्तरङ्ग की ओर जाने की बात करते हैं।

12.9

अथ चित्तं(म्) समाधातुं(न्), न शक्नोषि मयि स्थिरम्|
अभ्यासयोगेन ततो, मामिच्छाप्तुं(न्) धनञ्जय||9||

अगर (तू) मन को मुझ में अचल भाव से स्थिर (अर्पण) करने में अपने को समर्थ नहीं मानता, तो हे धनञ्जय ! अभ्यास योग के द्वारा (तू) मेरी प्राप्ति की इच्छा कर।

विवेचन:- श्रीभगवान जी कहते हैं कि अगर तू मन को मुझ में अचल भाव से स्थिर करने में अपने को समर्थ नहीं मानता, तो हे धनञ्जय! अभ्यास योग के द्वारा तू मेरी प्राप्ति की इच्छा कर।

अभ्यास अर्थात् पढ़ना नहीं, अपितु अभ्यास का अर्थ है चेष्टा करना, प्रयास करना, इसलिए हे धनञ्जय! तू पहले मेरी इच्छा तो कर। यदि मुझे प्राप्त करना है, तो मुझे प्राप्त करने की इच्छा कर। प्राप्त करने की इच्छा का अभ्यास कर और यदि यह भी नहीं कर सकता है तो फिर आगे सुन।

12.10

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि, मत्कर्मपरमो भव|
मदर्थमपि कर्माणि, कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि||10||

(अगर तू) अभ्यास (योग) में भी (अपने को) असमर्थ (पाता) है, (तो) मेरे लिये कर्म करने के परायण हो जा। मेरे लिये कर्मों को करता हुआ भी (तू) सिद्धि को प्राप्त हो जायगा।

विवेचन: श्रीभगवान जी कहते हैं कि यदि अभ्यास करने में भी असमर्थ हो तो जो भी काम करो, वह मेरा समझ कर करना आरम्भ करो। स्नान करते समय, भोजन पकाते समय, कार्य पर जाते समय अर्थात कोई भी कार्य करते समय वे सारे कार्य मुझे अर्पित करो। ऐसा करने वाले व्यक्ति को सिद्धि प्राप्त हो जाती है। यह अर्पण भाव दिन भर चलना चाहिए।किसी से बात भी कर रहे हो तो सोचो कि मुझसे बात कर रहे हो। फिर गलत बात निकलेगी ही नहीं।

जीवों का कलरव जो दिन भर सुनने में मेरे आवे |
तेरा ही गुणगान जान मन प्रमुदित हो अति सुख पावे ||

तेरा ही गुणगान चल रहा है, ऐसा सोच कर हर बात करना। चलते हो तो प्रदक्षिणा समझ लेना, भोजन करो तो वह भोग समझ लो, सोते हो तो समाधि समझ लेना। यही भक्ति है।

आदि शङ्करचार्य जी ने कहा:-

आत्मा त्वं गिरिजा मति: सहचरा: प्राणा: शरीरं गृहम्
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थिति:।
संचार: पदयो: प्रदक्षिणविधि: स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्।।

मैं जो-जो बोलूँ, तेरे स्तोत्र बन जाएँ, मैं जिन विषयों का उपभोग भी लूँ, वो भी तेरी पूजा बन जाए।

तू ही है सर्वत्र व्याप्त हरि, तुझमें यह सारा संसार ,
प्रतिफल निज इन्द्रिय समूह से जो कुछ भी आचार करूँ,
केवल तुझे रिझाने को बस तेरा ही व्यवहार करूँ ||

इतना कर ले, तेरी नैया पार लगाने के लिए मैं दौड़ा-दौड़ा चला आऊँगा।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता: मलय भैया
प्रश्न: सगुण और निर्गुण का वास्तविक अन्तर समझ में नहीं आ रहा है।
उत्तर: सगुण और निर्गुण में पहला अन्तर यह है कि सगुण में आप आकार देखते हैं और निर्गुण में भगवान का कोई विशिष्ट आकार नहीं है। निर्गुण में सर्वव्याप्त का भाव रहता है कि चराचर सृष्टि में भी वही व्याप्त हैं। निर्गुण भक्ति और ज्ञानयोग एक ही शब्द हैं। भगवान ने कहा कि ये दोनों ही मार्ग शिखर तक पहुँचते हैं। प्रश्न यह है कि आप कहाँ खड़े हैं? आप शिखर के पश्चिम में खड़े हैं तो आपको पूर्व की ओर चढ़ना पड़ेगा, लेकिन अगर आप शिखर के पूर्व में खड़े हैं तो आपको पश्चिम की ओर बढ़ना होगा। दोनों ओर का चलना अन्ततोगत्वा उसी शिखर पर पहुँचा देगा। मार्ग भले ही अलग हों लेकिन अन्तिम गन्तव्य एक ही है। भग्वद्गीता की विशेषता है कि यह शिखर पर जाने के सारे रास्ते बता रही है। आप खड़े कहाँ हैं? यह समझना आपका काम है। भगवान जगद्गुरु बनकर हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं, इससे अच्छी बात क्या हो सकती है?

प्रश्नकर्ता: अन्जू दीदी
प्रश्न: हम सगुण और निर्गुण, दोनों के उपासक बन सकते हैं? जैसे मुझे सुबह पूजा करने का समय कम मिलता है, तो जब मैं काम पर जाती हूँ, श्लोक आदि पढ़ती हुई जाती हूँ।
उत्तर: दो नावों में पाँव रख मैं नदी पार कर लूँ, यदि ऐसा सन्तुलन कौशल आपके पास है, तो बहुत अच्छा है। मूल रूप से हमारे अन्दर जो भाव हैं, वह सगुण के लिए हैं, तो दोनों नहीं हो रहा है। आप सगुण भक्ति ही कर रही हैं।

प्रश्नकर्ता: ओंकार भैया
प्रश्न: भगवद्गीता कृष्ण के बारे में है, आपने शबरी के बारे में क्यों बताया?
उत्तर: कृष्ण और राम एक ही हैं। भगवान ने दसवें अध्याय में अपनी विभूतियाँ बताई हैं। भगवान ने कहा कि शस्त्रधारियों में मैं राम हूँ। ये अलग-अलग नहीं हैं, भगवान के अलग-अलग रूप हैं।

प्रश्नकर्ता: प्रह्लाद भैया
प्रश्न: भक्ति के तीन मार्गों- कर्म, भक्ति और ज्ञान में श्रेष्ठ कौन सा है?
उत्तर: श्रेष्ठ और कनिष्ठ कुछ भी नहीं है। सारे रास्ते पहुँचते तो उसी गन्तव्य की ओर ही हैं। हमारे लिए क्या श्रेष्ठ है, यह पहचानने के लिए हमें अन्दर उतरना पड़ता है कि हमारे लिए उचित मार्ग कौन सा है?

प्रश्नकर्ता: पी. एन. उपाध्याय भैया
प्रश्न: तीसरे श्लोक में **कूटस्थमचलंध्रुवम** का अर्थ समझ नहीं आया। कृपया समझाइए।
उत्तर: इसमें कूटस्थं शब्द का अर्थ है निर्विकार अर्थात जिसमें कोई विकार ही नहीं बचा। हमारे अन्दर जब तक विचार हैं, तब तक विकार भी हैं। मन में सब कुछ शून्य हो गया और वहाँ पर हमने भगवान की प्रतिष्ठा कर दी, तो विचार चले गए और केवल भगवान बच गए। विकार भी चले गए। यह एक प्रक्रिया है, जिसका अभ्यास करना पड़ता है। इस श्लोक का अर्थ है - अचल, स्थिर और एक जगह पक्का, जैसे ध्रुवतारा एक स्थान पर ठहरा हुआ है, उसी प्रकार से निर्विकार भाव से जो सर्वत्र मुझे देखता है, उसके विषय में यह चर्चा की गई है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||